रीतिकाल के महान कवि और 'सतसई' के रचयिता
बिहारी सतसई
नयनन हीं सो बसियो, मन मोह्यो सुजान ।
कहें बिहारी हियड़ो रुयो, कहिं न जाहि पाहल्यान ॥
सतसईया के दोहरे, ज्यों नाक के तीर ।
देखन में छोटे लगें, घाव करें गंभीर ॥
कवि
बिहारी
अद्‌द्‌त काव्य शिल्प, गहन भाव और
संक्षिप्त शब्दों में विराट अर्थ के धनी
रीतिकाल के शिरोमणि कवि
– बिहारीलाल
"नहिं पराग, नहिं मधुर मधु, नहिं विकास इहिं काल ।
अलि कली हीं सो बंध्यो, आगे कौन हवाल ॥"
डा गीता रानी
कृति –
बिहारी सतसई
बिहारी सतसई
संक्षेप में सार कहने की अद्वित कला के प्रणेता

“गागर में सागर” : बिहारी सतसई में रीतिकालीन समाज, संस्कृति एवं काव्य-प्रवृत्तियों का समन्वित स्वरूप

हिंदी साहित्य के रीतिकालीन काव्य-जगत में बिहारीलाल का स्थान अद्वितीय एवं अनुपमेय है। उनकी कृति ‘बिहारी सतसई’ केवल सात सौ दोहों का संकलन न होकर एक युग की सांस्कृतिक चेतना का सघन निचोड़ है। इसीलिए विद्वानों ने इसे “गागर में सागर” की संज्ञा दी है—जहाँ लघुता में महत्ता और संक्षिप्तता में व्यापकता का अद्भुत सामंजस्य विद्यमान है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार रीतिकाल वह युग है जिसमें काव्य का केंद्र ‘रीति’ अर्थात् काव्यशास्त्रीय विधान और अलंकारिकता बन गया। यह काल राजनीतिक दृष्टि से मुगल सत्ता के प्रभाव का और सामाजिक दृष्टि से सामंती वैभव तथा विलासिता का काल था। अतः साहित्य भी इसी जीवन-दृष्टि का दर्पण बन गया। बिहारी इस युग के प्रतिनिधि कवि हैं, जिनकी रचनाओं में उस समय की सभी प्रमुख प्रवृत्तियाँ संक्षिप्त किन्तु प्रभावपूर्ण रूप में अभिव्यक्त हुई हैं।

1. राजाश्रय और दरबारी जीवन का यथार्थ

रीतिकालीन काव्य की प्रमुख विशेषता राजाश्रय रही है। कवि राजाओं और सामंतों के संरक्षण में रहते थे, जिससे उनके काव्य में दरबारी संस्कृति का स्वाभाविक प्रवेश हुआ। बिहारी आमेर के राजा जयसिंह के आश्रित थे। तथापि, वे मात्र प्रशस्तिगायक नहीं हैं; उनके दोहों में सूक्ष्म व्यंग्य और नीतिपरक चेतना भी विद्यमान है।

आचार्य शुक्ल ने लिखा है कि “बिहारी की वाणी में चमत्कार है, परंतु उसमें जीवन की गहरी दृष्टि भी निहित है।”
अर्थात् बिहारी दरबारी परिवेश में रहते हुए भी उससे ऊपर उठकर जीवन-सत्य को अभिव्यक्त करते हैं।

2. विलासिता और सामंती संस्कृति का प्रतिबिंब

रीतिकालीन समाज भोग-विलास, श्रृंगार और ऐश्वर्य का पर्याय बन चुका था। नारी-सौंदर्य, वस्त्राभूषण, श्रृंगारिक चेष्टाएँ और दरबारी उत्सव—ये सभी उस समय के जीवन के अभिन्न अंग थे। बिहारी ने इस विलासी संस्कृति का अत्यंत सूक्ष्म एवं कलात्मक चित्रण किया है।

उनके दोहों में नख-शिख वर्णन, श्रृंगारिक मुद्राएँ और भाव-चेष्टाएँ केवल बाह्य चित्रण नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति हैं। इसीलिए डॉ. नगेंद्र ने कहा है—
"बिहारी का काव्य रीतिकालीन सौंदर्य-दृष्टि का उत्कृष्ट प्रतिनिधित्व करता है।"

3. श्रृंगार-रस की चरम अभिव्यक्ति

रीतिकाल को यदि "श्रृंगार का स्वर्णयुग" कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। बिहारी इस रस के अप्रतिम साधक हैं। उनके यहाँ संयोग और वियोग दोनों ही रूपों में प्रेम की अनुभूति अत्यंत सूक्ष्मता से व्यक्त हुई है।

"नैनन हीं सों बात है, नैनन हीं सों पिरित
नैनन हीं सों हारि गए, नैनन हीं सों जीत।"

इस दोहे में नेत्रों के माध्यम से प्रेम की सम्पूर्ण प्रक्रिया का चित्रण, बिहारी की काव्य-कुशलता का अनुपम उदाहरण है। यहाँ अल्प शब्दों में गहन भाव-संपदा समाहित है।

4. नायिका-भेद और मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता

रीतिकालीन काव्यशास्त्र में नायिका-भेद का विशेष स्थान है। बिहारी ने नायिकाओं के रूप, स्वभाव, चेष्टा और मनोभावों का अत्यंत सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। उनके यहाँ नायिका केवल सौंदर्य की प्रतिमा नहीं, बल्कि एक जीवंत व्यक्तित्व है, जिसकी भाव-तरंगें पाठक को स्पर्श करती हैं।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में—
"बिहारी के दोहों में मनोभावों की जो सूक्ष्मता है, वह हिंदी काव्य में विरल है।"

5. प्रकृति का उद्दीपनात्मक एवं सांकेतिक प्रयोग

रीतिकालीन काव्य में प्रकृति का स्वतंत्र चित्रण अपेक्षाकृत कम है; वह मुख्यतः प्रेम-भावों को उद्दीप्त करने के साधन के रूप में प्रयुक्त होती है। बिहारी ने भी प्रकृति को नायिका के अंतर्मन का सहचर बना दिया है। ऋतु-परिवर्तन, चाँदनी, पवन, पुष्प आदि तत्व प्रेम की तीव्रता को बढ़ाने का कार्य करते हैं।

इस प्रकार प्रकृति यहाँ बाह्य दृश्य न होकर अंतर्मन की अभिव्यक्ति का माध्यम बन जाती है।

6. अलंकारिकता और काव्य-शिल्प का सौष्ठव

रीतिकाल अलंकार-प्रधान युग है, और बिहारी इस परंपरा के श्रेष्ठ शिल्पी हैं। उनके दोहों में उपमा, रूपक, अनुप्रास, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का अत्यंत सटीक और कलात्मक प्रयोग मिलता है।

डॉ. रामविलास शर्मा ने कहा है—
“बिहारी के दोहे भाषा और शिल्प की दृष्टि से अद्वितीय हैं; उनमें कसावट और काव्य-संयम का अनुपम उदाहरण मिलता है।”

उनकी काव्य-भाषा में संक्षिप्तता, लय, माधुर्य और व्यंजना-शक्ति का अद्भुत समन्वय है।

7. ब्रजभाषा की माधुर्यपूर्ण अभिव्यक्ति

बिहारी ने ब्रजभाषा को अपने काव्य की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। ब्रजभाषा की कोमलता और मधुरता ने उनके दोहों को और अधिक सरस एवं प्रभावशाली बना दिया। भाषा में न तो अनावश्यक विस्तार है और न ही जटिलता—केवल सारगर्भित अभिव्यक्ति है।

8. ‘गागर में सागर’ की काव्य-प्रतिभा

बिहारी की सबसे बड़ी विशेषता उनकी संक्षिप्तता है। वे अत्यल्प शब्दों में व्यापक अर्थ-विस्तार प्रस्तुत करते हैं। उनके दोहों में ध्वनि, व्यंजना और अर्थ की अनेक परतें होती हैं, जो पाठक को बार-बार चिंतन के लिए प्रेरित करती हैं।

यह विशेषता उन्हें अन्य रीतिकालीन कवियों से अलग और श्रेष्ठ बनाती है।

निष्कर्ष (आलोचनात्मक दृष्टि से)

समग्रतः 'बिहारी सतसई' रीतिकालीन काव्य की समस्त प्रवृत्तियों का सारभूत रूप है। इसमें दरबारी संस्कृति, विलासिता, श्रृंगारिकता, नायिका-भेद, अलंकारिकता तथा ब्रजभाषा की मधुर अभिव्यक्ति का समन्वय देखने को मिलता है।

यद्यपि आलोचकों ने रीतिकाल को "सामाजिक यथार्थ से पलायन का युग" भी कहा है, तथापि बिहारी का काव्य इस आरोप से पूर्णतः मुक्त नहीं होते हुए भी अपनी कलात्मकता, सूक्ष्मता और व्यंजना-शक्ति के कारण हिंदी साहित्य में एक अमर स्थान प्राप्त करता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बिहारी केवल रीतिकाल के कवि ही नहीं, बल्कि काव्य-शिल्प और भाव-संक्षेप के अद्वितीय साधक हैं, जिनकी काव्य-प्रतिभा हिंदी साहित्य की अमूल्य धरोहर है।